e-ISSN: 2319-8753 | p-ISSN: 2347-6710

IJIRSET

International Journal of Innovative Research in
SCIENCE | ENGINEERING | TECHNOLOGY

INTERNATIONAL JOURNAL OF INNOVATIVE RESEARCH

IN SCIENCE | ENGINEERING | TECHNOLOGY

Volume 11, Issue 9, September 2022

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA

Impact Factor: 8.118

9940 572 462 6381 907 438 ijirset@gmail.com www.ijirset.com

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology (IJIRSET)

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2320-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 8.118|| A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal |

||Volume 11, Issue 9, September 2022||

|DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1109107|

आदिवासी जीवन, संस्कृति का पर्यावरण संरक्षण में योगदान

DR. AMRENDRA PRATAP GOND

Assistant Professor, Department of Defence and Strategic Studies, D.A.V. College, Kanpur,

Uttar Pradesh, India

सार

भारत में करीब तीन हजार की संख्याँ में विभिन्न जातियों और उप-जातियाँ निवास करती है. सभी का रहन-सहन,रीति-रिवास एवं परम्पराएं अपनी विशिष्ट विशेषताओं को दर्शाती है.कई जातियाँ मसलन गोंड-भील-बैगा-भारिया आदि जंगलों मे आनादिकाल से निवास करती आ रही है. सभी की आवश्यकताओं की पूर्ति जंगलो से होती है. इन जातियों की सामाजिक-आर्थिक-राजनितिक एवं कुटुम्ब व्यवस्था की अपनी अलग पहचान रही है. इन लोंगो में वन-संरक्षण करने की प्रबल वृत्ति है. अतः वन एवं वन्य-जीवों से उतना ही प्राप्त करते हैं,जिससे उनका जीवन सुलभता से चल सके और आने वाली पीढी को भी वन-स्थल धरोहर के रुप में सौप सकें. इन लोगों में वन संवर्धन, वन्य जीवों एवं पालतू पशुओं का संरक्षण करने की प्रवृत्ति परम्परागतो है. इस कौशल दक्षता एवं प्रखरता के फ़लस्वरुप आदिवासियों ने पहाडों, घाटियों एवं प्राकृतिक वातावरण को संतुलित बनाए रखा. स्वतंत्रता से पूर्व समाज के विशिष्ट वर्ग एवं राजा-महाराजा भी इन आदिवासी क्षेत्र से छेड-छाड नहीं किया करते थे. लेकिन अग्रेजों ने आदिवासी क्षेत्रों की परम्परागत व्यवस्था को तहस-नहस कर डाला, क्योंकि यूरोपीय देशों में स्थापित उद्दोगों के लिए वन एवं वन्य-जोवों पर कहर ढा दिया. जब तक आदिवासी क्षेत्रों के प्राकृतिक वातावरण में सेंध नहीं लगी थी, तब तक हमारी आरण्यक-संस्कृति बरकरार बनी रही. आधुनिक भौतिकवादी समाज ने भी कम कहर नहीं ढाया. इनकी उपस्थिति से उनके परम्परागत मूल्यों एवं सांस्कृतिक मूल्यों का जमकर ह्रास हुआ है. साफ़-सुथरी हवा में विचरने वाले,जंगल में मंगल मनाने वाले इन भोले भाले आदिवासियों का जीवन में जहर सा घुल गया है. आज इन आदिवासियों को पिछडेपन, अशिक्षा,गरीबी,बेकारी एवं वन-विनाशक के प्रतीक के सुप में देखा जाने लगा है. उनकी आदिम संस्कृति एवं अस्मिता को चालाक और लालची उद्दोगपति खुले आम लूट रहे हैं. जंगल का राजा अथवा राजकुमार कहलाने वाला यह आदिवासीजन आज दिहाडी मजदूर के रुप में काम करता दिखलायी देता है. चंद सिक्कों में इनके श्रम-मूल्य की खरीद-फ़ारोख्त की जाती है और इन्हीं से जंगल के पेडों और जंगली पशु-पक्षियों को मारने के लिए अगुअ बनाया जाता है. उन्होंने सपने में भी कल्पना नहीं की होगी की पीढी दर पीढी जिन जंगलों में वे रह रहे थे, उनके सारे अधिकारों को ग्रहण लग जाएगा. विलायती हुकूमत ने सबसे पहले उनके अधिकारों पर प्रहार किया और नियम प्रतिपादित किया कि वनों की सारी जिम्मेदारी और कब्जा सरकार की रहेगी और यह परम्परा आज भी बाकायदा चली आ रही है.

परिचय

वे अब भी "झूम खेती" करते है. पेडों को जलाते नहीं है, जिसके फ़लों की उपयोगिता है. महुआ का पेड इनके लिए किसी कल्पवृक्ष" से कम नहीं है. जब इन पर फ़ल पकते हैं तो वे इनका संग्रह करते हैं और पूरे साल इनसे बनी रोटी खाते है. इन्हीं फ़लों को सडाकर वे उनकी शराब भी बनाते हैं. शराब की एक घूंट इनमें जंगल में रहने का हौसला बढाता है.

देश की स्वतंत्रता के उपरान्त पंचवर्षीय योजनाओं की स्थापनाएं, बुनियादी उद्दोगों की स्थापनाएं एवं हरित क्रांति जैसे घटकों के आधार पर विकास की नींव रखने वाले तथाकथित बुद्दिजीवियों ने हडबडाहट में "एकानामी" एवं "एकालाजी"के सह-संबंधों को भूल जाने अथवा जानबूझकर "इगनोर" करने की प्रवृति के चलते, हमारे सम्मुख पारिस्थितिकी की विकट समस्या पैदा कर दी हैं. समझ से परे है कि विकास के नाम पर आदिवासियों को विस्थापित कर उन्हें घुम्मकड की श्रेणी में ला खडा कर दिया है और द्रुतगति से वनों की कटाई करते हुए बडॆ-बडॆ बांधों का निर्माण करवा दिया है.. यदि आदिवासियों की सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों को भी दृष्टि में रखकर इन सभी योजनाओं का क्रियान्वित किया जाता, तो संभव है कि पर्यावरण की समस्या विकट नहीं होती और न ही प्रकोप होता, जैसा कि अभी हाल ही में आए प्राकृतिक प्रकोप ने "उत्तराखण्ड" को खण्ड-खण्ड कार दिया,से बचा जा सकता था. यह भी सच है कि हमें विश्व संस्कृति के स्तर पर देश की अर्थव्यवस्था को सुद्दढ बनाते हुए समानान्तर स्तर पर लाना है,लेकिन "अरण्य़ संस्कृति" को विध्वंश करके किये जने की परिकल्पना कालान्तर में लाभदायी सिद्ध होगी,ऎसा सोचना कदापि उचित नहीं माना जाना चाहिए. हमें अपने परम्परागत सांस्कृतिक मूल्यों, सामाजिक परम्प्राओं क विनाश न करते हुए आदिवासियों की वन एवं

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2320-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 8.118|| A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal |

||Volume 11, Issue 9, September 2022||

|DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1109107|

वन्य-जीव संस्कृति को बगैर छेड-छाड किए संरक्षण प्रदान किया जाना चाहिए. एक स्थान से दूसरे स्थान पर विस्थापन न तो आदिवासियों को भाता है और न ही वन्य जीव-जन्तुओं को, लेकिन ऎसा बडॆ पैमाने पर हो रहा है, इस पर अंकुश लगाए जाने की जरुरत है.[1,2] अगर ऎसा नहीं किया गया तो निश्चित जानिए कि वनों का विनाश तो होगा ही, साथ ही पारिस्थितिकी असंतुलन में भी वृद्धि होगी. अगर एक बार संतुलन बिगडा तो सुधारे सुधरने वाला नहीं है.

संविधान में आद्दिवासियों को यह वचन दिया गया है कि वे अपनी विशिष्ट पहचान को बनाए रखते हुए राष्ट्र की विकासधारा से जुड सकते हैं. अतः कडा निर्णय लेते हुए सरकार को आगे आना होगा,जिससे उनकी प्राकृतिक संस्कृति पर कोई प्रतिकूल असर न पडॆ.

हम सब जानते हैं कि उनकी भूमि अत्यधिक उपजाऊ नहीं है और न ही खेती के योग्य है. फ़िर भी वे वनों में रहते हुए वनों के रहस्य को जानते हैं और "झूम" पद्दति से उतना तो पैदा कर ही लेते हैं,जितनी कि उन्हें आश्यकता होती है. यदि इससे जरुरतें पूरी नहीं हो सकती तो वे महुआ को भोजन के रुप में ले लेते हैं या फ़िर आम की गुढलियों कॊ पीसकर रोटी बनाकर अपना उदर-पोषण कर लेते हैं, लेकिन प्रकृति से खिलवाड नहीं करते., फ़िर वे हर पौधे-पेडॊं से परिचित भी होते हैं, कि कौनसा पौधा किस बिमारी में काम में आता है, कौनसी जडी-बूटी किस बिमारी पर काम करती है, को भी संरक्षित करते चलते हैं.

विंध्याचल-हिमालय व अन्य पर्वत शिखर हमारी संकृति के पावन प्रतीक हैं.. इन्हें भी वृक्षविहीन बनाया जा रहा है.,क्योंकि वनवासियों को उनके अधिकरों से वंचित किया ज सके. इन पहाडियों पर पायी जाने वाली जडी बूटियां, ईंधन, चारा एवं आवश्यक्तानुसार इमारती लकडी प्रचूर मात्रा में प्राप्त होती रहे..आदिवासियों को जंगल धरोहर के रुप में प्राप्त हुए थे, वे ही ठेकेदारों के इशारे पर जंगल काटने को मजबूर हो रहे हैं.. यद्दपि पर्वतीय क्षेत्रों में अनेकों विकास कार्यक्रम लागू किए जा रहे हैं लेकिन उनका प्रत्यक्ष अथवा परोक्षरुप से उन्हें फ़ायद होने वाला नहीं है., आदिवासियों को संरक्षण प्राप्त नहीं होने से केवल वन संस्कृति एवं वन्य-जीव सुरक्षा का ही ह्रास नहीं हो रहा है बल्कि देश की अखण्डता को खंडित करने वाले तत्व अलग-अलग राज्यों की मांग करने को मजबूर हो रहे हैं.इन सबके पीछे आर्थिक असंतुलन एवं पर्यावरण असंतुलन जैसे प्रमुख कारण ही जड में मिलेंगे.

हमारे देश की अरण्य संस्कृति अपनी विशेषता लिए हुए थी,जो शनैः-शनैः अपनी हरीतिमा खोती जा रही है. जहां-जहां के आदिवासियों ने अपना स्थान छोड दिया है,वहां के वन्य-जीवों पर प्रहार हो रहे हैं,बल्कि यह कहा जाए कि वे लगभग समाप्ति की ओर हैं, उसके प्रतिफ़ल हमें सूखा पडने या कहें अकाल पडने जैसी स्थिति की निर्मिति बन गई है..फ़िर सरकार को करोडॊ रुपया राहत के नाम पर खर्च करने होते हैं. लाखों की संख्या में बेशकीमती पौधे रोपने के लिए दिए जाते हैं, लेकिन उसके आधे भी लग नहीं पाते. यदि लग भी गए तो पर्याप्त पानी और खाद के अभाव में मर जाते हैं. जाब शहरों के वृक्ष सुरक्षित नहीं है तो फ़िर कोसो दूर जंगल में उनकी परवरिश करने वाला कौन है? हम अपने पडौस के देशो में जाकर देखें, उन्होंने प्रभावी ढंग से सफ़लतापूर्वक अनुकरणीय़ कार्य किया है और पेडॊं की रक्षा करते हुए हरियाली को बचाए रखा है.[2,3]

जब आदिवासियों से वन-सम्पदा का मालिकाना हक छीनक्रर केन्द्रीय एवं राज्य सरकारों के हाथॊ में चले जाएंगे तो केवल विकास के नाम पर बडॆ-बडॆ बांध बांधे जाएंगे और बदले में उन्हें मिलेगा बांधो से निकलने वाली नहरें, नहरों के आसपास मचा दलदल और भूमि की उर्वरा शक्ति को कम करने वाली परिस्थिति और विस्थापित होने की व्याकुलता और जिन्दगी भर की टीस, जो उसे पल-पल मौत के मुंह में ढकेलने के लिए पर्याप्त होगी.

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2320-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 8.118|| A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal |

||Volume 11, Issue 9, September 2022||

|DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1109107|

विचार-विमर्श

आदिवासी क्षेत्रों में होने वाले विध्वंस से जलवायु एवं मौसम में परिवर्तन द्रुत गति से हो रहा है. कभी भारत में ७०% भूमि वनों से आच्छादित थी आज घटकर २०-२२ प्रतिशत रह गई है. वनो के यह चिंता का विषय है. वनों की रक्षा एवं विकास के नाम पर पूरे देश में अफ़सरों और कर्मचरियों की संख्यां में बेतरतीब बढौतरी हुई हैं,उतने ही अनुपात में वन सिकुड रहे हैं. सुरक्षा के नाम पर गश्ति दल बनाए गए हैं,फ़िर भी वनों की अंधाधुंध कटाई निर्बाधगति से चल रही है. कारण पूछे जाने पर एक नहीं,वरन अनेकों कारण गिना दिए जाते हैं.,उनमे प्रमुखता से एक कारण सुनने में आता है कि जब तक ये आदिवासी जंगल में रहेंगे, तब तक वन सुरक्षित नहीं हो सकते. कितना बडा लांझन है इन भेले-भाले आदिवासियों पर, जो सदासे धरती को अपनी मां का दर्जा देते आए हैं. रुखा-सूखा खा लेते हैं, मुफ़लिसी में जी लेते हैं,लेकिन धरती पर हल नहीं चलाते, उनका अपना मानना है कि हल चलाकर वे धरती का सीना चाक नहीं कर सकते.

रत का हृदय कहलाने वाले मध्यप्रदेश के छिन्दवाडा जिले से 62 किमी. तथा तामिया विकास खंड से महज 23 किमी.की दूरी पर, समुद्र सतह से 3250 फ़ीट ऊँचाई पर तथा भूतल से 1200 से 1500 फ़ीट गराई में "कोट" यानि "पातालकोट" स्थित है. जिसमें आज भी आदिवासियों के बारह गांव सांस लेते हुए देखे जा सकते हैं. यहाँ के आदिवासियों को धरती-तल पर बसाने के लिए कई प्रयत्न किए गए,लेकिन वे इसके लिए कतई तैयार नहीं होते. अतः यह दोषरोपण मढना कि अदिवासियों की वजह से वन सुरक्षित नही है, एक मूर्खतापूर्ण लांछन है.[3,4]

(पातालकोट)

अतः सच्चाई का दामन पकडना होगा. यदि आदिम लोगो की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक विरासत को सुरक्षित रखते हुए तथा उनकी सक्रीय भागीदारी सुनिश्चित करते हुये उन्हें विकास की योजनाओं के साथ जोड दिया जाए तो निश्चित ही कहा जा सकता है

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2320-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 8.118|| A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal |
||Volume 11, Issue 9, September 2022||
|DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1109107|

कि आदिम क्षेत्र में पर्यावरण के साथ अन्य भागों कों भी सुरक्षित रखा जा सकता है, स्वस्थ पर्यावरण पर सारे राष्ट्र का अस्तित्व वं भविष्य टिका हुआ है, रह सकता है और वह प्रगति के पथ पर अग्रसर हो सकता है.

पर्यावरण मानव जीवन का अभिन्न अंग जिसके संरक्षण के बिना मानव का अस्तित्व सुरक्षित नही है लेकिन अफसोस कि बात है कि। वर्तमान विज्ञान व तकनीकी के युग में मानव की स्वार्थी प्रवृत्ति, औधोगिकरण, रोड चौड़ी करण, वन संसाधन अतिदोहन व अन्य विकास कार्यो के नाम पर वनों के दोहन की वजह से ऑक्सीजन स्रोत नष्ट हो रहे है व कार्बन डाइऑक्साइड की बढ़ती मात्रा मानव व प्रकृति के अस्तित्व के लिए भयानक खतरा पैदा हो गया है। वर्तमान में तेजी से घटते जंगल और बदलते हुए पर्यावरण को बचाने के लिए सदियों से जंगलों के साथ जीवन का संबंध निभाने वाले आदिवासी समुदाय की अहम भूमिका है। भारत मे लगभग 645 अलग-अलग जनजातियाँ निवास करती है। जल ,जंगल और ज़मीन को परंपराओं में भगवान का दर्जा देने वाले आदिवासी बिना किसी दिखावे के जंगलों और स्वयं के अस्तित्व को बचाने के लिए आज भी प्रयासरत है । यह समुदाय परंपराओं को निभाते हुए शादी से लेकर हर शुभ कार्यो में पेड़ो को साक्षी बनाते है ।[4, 5] वन- संरक्षण की प्रबल प्रवृत्ति के कारण आदिवासी वन व वन्य-जीवों से उतना ही प्राप्त करते है जिससे उनका जीवन सुलभता से चल सके व आने वाली पीढ़ी को भी वन-स्थल धरोहर के रूप में दिए जा सके । इनमें वन संवर्धन, वन्य जीवों व पालतू पशुओं कला संरक्षण करने की प्रवृत्ति परंपरागत है। इस कौशल दक्षता व प्रखरता की वजह से आदिवासियों ने पहाड़ों, घाटियों व प्राकृतिक वातावरण को आज तक संतुलित बनाए रखा है। आज़ादी के बाद से तकनीकी और विज्ञान के युग मे संसाधनों के अत्यधिक खनन और कॉरपोरेट्स के हस्तक्षेप व बहुउद्देश्यीय परियोजनाओं के चलते आदिवासियो की बेदखली हुई, विधिक कानून धराशाही होने लगे, आदिवासियो को बुनियादी जरूरते प्रदान करना, रोजगार, पुनर्वास व उचित मुआवजा प्रदान करना जरूरी है।

आदिवासी जिन्हें अक्सर जनजाति, वन-पुत्र आदि नामो से जाना जाता है, इस धरती से सबसे पुराने साथी है जिन्होंने प्रकृति को माँ समान समझा व जल, जंगल, ज़मीन की रक्षार्थ प्रांण भी न्यौछावर किए ।[5,6]
आदिवासी जंगल मे निवास करने वाली जनजाति समुदाय है जंगल ही उनका परिवार है जंगली जानवरों को भी वे अपने परिवार का अटूट हिस्सा मानते है, प्रकृति से प्राप्त संसाधनों से ही वे अपना जीवन निर्वाह करते है लेकिन प्रकृति से उतना ही लेते है जितने की जरूरत होती है साथ ही वृक्षारोपण करना, बाग़वानी, फ़सल पैदा कर वे सामंजस्य बनाए रखते है। औधोगिकरण व तकनीकी युग से पहले तक पर्यावरण की स्थिति बहुत सुरक्षित थी लेकिन विज्ञान के युग ने पर्यावरण का बुरी तरह खनन किया, उधोगपतियों ने अपने निजी स्वार्थ के चलते आदिवासियो को बेदखल कर के जंगलों की जगह बड़े बड़े प्लांट्स स्थापित किए, कंपनियां खोली। वक्त बदल गया वक्त के साथ साथ आदिवासियो का रहन-सहन भी बदला लेकिन वक्त के साथ भी आदिवासियो का जल, जंगल, ज़मीन के प्रति लगाव कम नही हुआ, आज भी जन-जातीय क्षेत्रो में पर्यावरण हरा भरा व प्रदूषणरहित मिलता है ।
संयुक्त राष्ट्र के "आदिवासी मामलों के स्थायी फोरम की 2007 में जारी रिपोर्ट के अनुसार, आदिवासी समुदाय विश्व के कुल 80 फीसदी सांस्कृतिक और जैव विविधता के संरक्षण और संवर्धन के लिए सीधे तौर पर उत्तरदायी हैं ।

परिणाम

प्रकृति को माता मानने वाले व जल ,जंगल और जमीन को भगवान का दर्जा देने वाले आदिवासियो ने सदियो से बिना किसी स्वार्थ के इनकी रक्षा की है। आदिवासियो के जीवन मे जल, जंगल और जमीन का विशेष महत्व रहा है :

-
आदिवासी अनादिकाल से जंगलों में समुदाय बनाकर रहते है । वन संरक्षण की प्रबल प्रवृति के कारण ये वन व वन्य जीवों से उतना ही प्राप्त करते है जितने की जरूरत हो, जिससे उनका जीवन सुलभता से चल सके व आगामी पीढ़ियों को भी वन-स्थल धरोहर के रूप में दिए जा सके ।

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2320-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 8.118|| A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal |

||Volume 11, Issue 9, September 2022||

|DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1109107|

-
आदिवासियो के शादी से लेकर प्रत्येक त्यौहार पेड़ो को साक्षी मानकर पूर्ण किये जाते है, आदिवासियो के वैवाहिक समारोह में सेमल के पत्तो का होना विशेष रस्म माना जाता है ।

- आदिवासी जंगलो से जड़ी-बूटियों का संग्रह, फल-फूल, सब्जियां संग्रहण, लकड़ीकर्तन करते है, उन्हें शहरों में बेचकर अपनी जीविकायापन करते है बदले में वे भरपूर वृक्षारोपण करते है खासकर बारिस के तुरंत बाद वे बड़े स्तर पर तरह तरह के पेड़ उगाते है , साथ ही बड़े होने तक उनकी देखभाल भी करते है ।[7,8]

-
आदिवासियो में वन संवर्धन, वन्य जीवों व पालतू पशुओं का संरक्षण करने की प्रवृति परंपरागत है। इस कौशल दक्षता व प्रखरता की वजह से आदिवासियो ने पहाड़ो, घाटियों एवं प्राकृतिक वातावरण को आज त क संतुलित बनाए रखा है ।

-
आदिवासी ही इस बात को समझते हैं कि प्राकृतिक जंगल उगाये नहीं जा सकते, खुद बनते है। आदिवा सियों ने अपनी सामाजिक व्यवस्था के तहत कुछ बंदिशें स्वयं पर लगा रखी हैं, इन बंदिशों के तहत महु आ, आम, करंज, जामुन, केड आदि के वृक्ष वे नहीं काटते, सखुआ के पेड़ की बंदिश यह कि तीन फुट छोड़ कर ही उसे काटना है । वे जलावन के लिए हमेशा सूखे पेड़ ही काटते हैं इसलिए जहां आदिवा सी हैं, वहां जंगल बचे हुए हैं व जहां वे नहीं, वहां जंगल का नामो निशान मिट चुका है ।

-
आदिवासियो की वजह से ही जलवायु परिवर्तन के प्रभाव से अभी तक बची हुई है, उनके द्वारा जल, जंग ल और जमीन के संरक्षण से वातावरण शुद्ध बना हुआ है जो कि नियमित वर्षा, स्वच्छ जल, स्वच्छ वायु, उपजाऊ जमीन सहित संसाधनों की उपलब्धता के लिए अतिआवश्यक है।

फ़ोटो - राजस्थान के आदिवासी क्षेत्रों की गतिविधियां

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2320-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 8.118|| A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal |

||Volume 11, Issue 9, September 2022||

|DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1109107|

आदिम जनजातियों का राज्य वार विवरण निम्न प्रकार है :
1. आंध्र प्रदेश - बोडो गडबा, गुडोब गडबा, चेन्दू, पूर्जा, कोलम, कॉडा रेड्डी, डोगरिया खोंड
व्यवसाय - खाद्य संग्रहण, कृषि, परिवर्तनीय खेती एवं विविध व्यवसाय
2. बिहार - असेर, बिरहोर, बिरजा, हिल खढ़िया, कोरवा, माल पहाड़िया, सौरिया, सवर
व्यवसाय - खाद्य संग्रहण, कृषि एवं परिवर्तनीय खेती
3. गुजरात - काथोडी, कोटवालिया, पाढर, सिडोइ, कोटघा
व्यवसाय - कृषि, परिवर्तनीय खेती एवं विविध व्यवसाय
4. कर्नाटक - जेमू कुरूवा, कोरामा
व्यवसाय - विविध व्यवसाय
5. केरल - चोलानायकयन, कादर, कट्टाउनायकन, कुरूम्बा, कोरगा
व्यवसाय - खाद्य संग्रहण
6. मध्य प्रदेश - अबूझमाड़िया, बैगा, भाड़िया, हिल कोरबा, कमार, साहरिया, बिरोहार
व्यवसाय - खाद्य संग्रहण, परिवर्तनीय खेती एवं विविध व्यवसाय
7. महाराष्ट्र - कट्कड़िया, कोलम, माड़िया गोंड
व्यवसाय - खाद्य संग्रहण, कृषि एवं विविध व्यवसाय
8. मणिपुर - मर्रम, नागा
व्यवसाय - कृषि
9. उड़ीसा -
बिरहोर, बोंडा पोराजा, दीदाई, डोंगरिया खोंड, जुआंग खाड़िया, कुटिया खोंड, लांजिया सौरत, लोढ़ा, मानकी दियास, पौड़ी भुयन, सौरा
व्यवसाय - खाद्य संग्रहण, कृषि, परिवर्तनीय खेती एवं विविध व्यवसाय
10. राजस्थान - मीना / मीणा, भील, गरासिया, कथोडी, सहरिया
व्यवसाय - खाद्य संग्रहण ,कृषि ,विविध व्यवसाय
11. तमिलनाडु - कट्टूनायकन, कोटा, कुरूम्बा, इरूला, पणियन, टोडा
व्यवसाय - खाद्य संग्रहण, परिवर्तनीय खेती एवं विविध व्यवसाय
12. त्रिपुरा - रियांग
व्यवसाय - परिवर्तनीय खेती
13. उत्तर प्रदेश - बुक्सा, रजिया
व्यवसाय - खाद्य संग्रहण, कृषि
14. पश्चिम बंगाल - बिरहोर, लोढ़ा, टोटो
व्यवसाय - खाद्य संग्रहण
15. अण्डमान व निकोबार द्वीप समूह - ग्रेट अण्डमानी, जरवा, ओंगे, सेंटनेली, शोम्पेन
व्यवसाय - खाद्य संग्रहण

आदिवासी क्षेत्रों में देश के विभिन्न स्थानों पर वर्षो से आंदोलन चल रहे है जो बेदखली के विरोध में उचित मुआवजा, रोजगार, पुनर्वास की मांग को लेकर संघर्षरत है :
(1) पश्चिमी घाट बचाओ आंदोलन (महाराष्ट्र, गोवा, कर्नाटक, केरल),
(2) कर्नाटक आंदोलन (आदिवासियों के अधिकार के लिए),
(3) शान्त घाटी बचाओ आंदोलन (उष्ण कटिबंधीय सदाबहार वनों को बचाना),
(4) कैगा अभियान (नाभिकीय ऊर्जा संयंत्र के विरोध में),
(5) जल बचाओ, जीवन बचाओ (बंगाल से गुजरात तथा दक्षिण में कन्याकुमारी तक, मछली बचाओ),
(6) बेडथी आंदोलन (कर्नाटक की जल विद्युत योजना के विरोध में),
(7) टिहरी बाँध परियोजना (उत्तराखण्ड मे टिहरी बाँध के विरोध में),
(8) नर्मदा बचाओ आंदोलन
(9) दून घाटी का खनन विरोध
(10) मिट्टी बचाओ अभियान
(11) यूरिया संयंत्र का विरोध (मुम्बई से 25 किलोमीटर दूर वैशड़ में),
(12) इन्द्रावती नदी पर बाँध का विरोध (मुम्बई के इन्द्रावती नदी पर गोपाल पट्टनम एवं इचामपतल्ली बाँध का आदिवासियों द्वारा विरोध),

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2320-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 8.118|| A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal |

||Volume 11, Issue 9, September 2022||

|DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1109107|

(13) गंध मर्दन बॉक्साइट विरोध संबंधित क्षेत्रों मे संरक्षण के लिए किया जा रहा है पर्यावरण हमारे जीवन का एक महत्वपूर्ण अंग है।
(14) केवड़िया आदिवासी आंदोलन (नर्मदा जिले में स्टेच्यू ऑफ यूनिटी के आसपास के क्षेत्र में आदिवासियो की बेदखली के खिलाफ)

प्राचीन काल से ही जंगल आदिवासियो का घर रहा है जहाँ वे समुदाय बनाकर रहते आए है । रियासत काल में भी उन्हें जंगलों से बेदखल नही किया गया ।
आज़ादी के बाद भारत मे आदिवासियो को कई विधिक अधिकार प्रदान किए :

- भारतीय संविधान की पांचवी व छठी अनुसूची
- अनुसूचित जाति, जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989
- पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रो में विस्तार) अधिनियम, 1996 (PESA)
- अनुसूचित जनजाति और अन्य परम्परागत वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम, 2006 (FRA)
- निःशुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा (आरटीई) अधिनियम, 2009
- भूमि अर्जन, पुनर्वासन और पुनर्व्यवस्थापन में उचित प्रतिकर और पारदर्शिता अधिकार अधिनियम, 2013

उपर्युक्त उपबंधों को कठोरतापूर्वक लागू नही किए जाते, जिसके चलते उनके विधिक अधिकारों का उल्लंघन होता है । आदिवासियो को बेदखल किया जा रहा है जिसकी वजह निम्न है :

-
साक्षरता की कमी के चलते आदिवासी अपने विधिक अधिकार व कल्याणकारी योजनाओं से अनभिज्ञ रहते है।[6,7]

-
कॉरपोरेट्स के राजनेताओं से मिलीभगत से जंगलों में हस्तक्षेप के विरोध करने वालो को कथित रूप से नक्सली कहकर राजद्रोह, देशद्रोह के आरोप में जेल में डाल देते है। नक्सलवाद एक सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक समस्या है जो झारखंड, ओडिसा, बिहार, छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र सहित कुछ अन्य राज्यो में फैला हुआ है। इसके समाधान हेतु बहुआयामी दृष्टिकोण अपनाने को जरूरत है, आदिवासियो को बुनियादी जरूरते शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, आवास की जरूरत है।

-
जनजातियां अपने जीवन निर्वाह हेतु भूमि व वन संसाधनों पर निर्भर होती है, समय के साथ उनके आवास आरक्षित वन, सुरक्षित वन घोषित कर दिए जाते है, उन्हें बिना मुआवजा दिए वहां से हटा दिया जाता है और बेदखल कर दिया जाता है।

-
मानव तस्करी, ऋणग्रस्तता, बंधुआ मजदूरी के चलते इन्हें धीरे धीरे अपने आवास छोड़ने पर मजबूर कर दिया जाता है।

-
जनजातियों के साथ सम्मानजनक व्यवहार नही किया जाता, उनसे जानवरो जैसा व्यवहार किया जाता है उनकी महिलाओं व युवतियों से बलात्कार जैसी घटनाएं भी सामने आई है । अंडमान की जनजातियां जरावा, ओंगे, सेंटिनल इनका शिकार होती रही है।

-
जनजातियों के साथ एक बड़ी समस्या विकास परियोजनाओं, बांध बनाना, वन क्षेत्र में कोई प्रोजेक्ट स्थापित करना, वन्यजीव संरक्षण क्षेत्र घोषित करना, खनन कार्य करवाना, कॉरपोरेट्स द्वारा कंपनियां स्थापित करने से आदिवासियो को वन क्षेत्र से प्रवासित कर दिया जाता है, उन्हें उचित मुआवजा, रोजगार, आवास व जीवन निर्वाह के उपाय पर ध्यान नही दिया जाता।[7,8]

- पी.ई.एस.ए एक्ट, 1996 के अंतर्गत अनुसूचित क्षेत्रो में भूमि वियोजन रोकने, अनुसूचित जनजातियों की अवैध वियोजित भूमि को लौटाने, वन भूमि के अधिग्रहण के मामले में प्रभावित क्षेत्र की ग्राम सभा से परामर्श करना व उनकी स्वतंत्र सहमति आवश्यक है लेकिन व्यवहार में उनसे न तो परामर्श लिया जाता है, न ही उन्हें कोई नोटिस भेजा जाता है व न ही उनके हस्ताक्षर लिए जाते है।
- भूमि अधिग्रहण, पुनरुद्धार एवं पुनर्वास व उचित मुआवजे एवं पारदर्शिता अधिकार अधिनियम, 2013 के अंतर्गत जनजातियों को दिया गया मुआवजा कम होता है एवं पुनर्वास पर प्रदान की गई जीवन

| e-ISSN: 2319-8753, p-ISSN: 2320-6710| www.ijirset.com | Impact Factor: 8.118|| A Monthly Peer Reviewed & Referred Journal |

||Volume 11, Issue 9, September 2022||

|DOI:10.15680/IJIRSET.2022.1109107|

परिस्थितियां बहुत घटिया होती है । हाल ही में गुजरात के केवड़िया में जहाँ स्टेच्यू ऑफ यूनिटी के आस पास के आदिवासियो को गुजरात उच्च न्यायालय की रोक के आदेश के बावजूद हटाया जा रहा है, उनके पुनर्वास, रोजगार की व्यवस्था करना जरूरी है साथ ही उचित मुआवजा दिया जाना चाहिए।

-

जनजातीयो के दावे एकल की जगह सामुदायिक होते है जिनका लिखित प्रमाण नही होता, मौखिक साक्ष्य के चलते उन्हें वैयक्तिक अधिकार स्थापित करने में कठिनाई उत्पन्न होती है ।
सदियो से पर्यावरण के रक्षक रहे आदिवासियो को बेदखली से बचाव हेतु उन्हें बुनियादी जरूरते शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, पुनर्वास, उचित मुआवजा प्रदान करे साथ ही विधिक कानूनों का सख्ती से पालन सुनिश्चित करवाना जरूरी है। कॉरपोरेट्स के अनियंत्रित हस्तक्षेप को रोककर आदिवासियो का संरक्षण किया जाए व उच्च न्यायालय के आदिवासियो को निष्काषित न करने के निर्णय का पालन किया जाए।[8,9]

निष्कर्ष

आदिवासी समुदाय सदियो से जल, जंगल और जमीन के रक्षक रहे है। पर्यावरण संरक्षण, जलवायु की नियमितता, संधारणीय विकास में आदिवासियो का मुख्य योगदान रहा है। पुरातन काल से ही आदिवासी प्रकृति को माता व जल, जंगल, जमीन को भगवान समान मानते रहे है साथ ही वन्य जीवों को परिवार का हिस्सा मानते है। रियासत काल मे भी राजाओं ने इनके क्षेत्रो मे हस्तक्षेप नही किया लेकिन विज्ञान व तकनीकी युग व वर्तमान कॉरपोरेट्स व पूंजीवाद के फलस्वरूप उद्धोगपतियो का जंगलों में हस्तक्षेप बढ़ने लगा । संविधान द्वारा बनाए हुए कानूनों की धज्जियां उड़ने लगी है व जनजातियों को मानव तस्करी, बंधुआ मजदूरी सहित कथित नक्सलवाद के आरोप में जंगलों से बेघर किया जा रहा है जिसकी वजह से पर्यावरण संरक्षण में होने वाले नुकसान को सम्पूर्ण मानव जगत को उठाना पड़ेगा । आदिवासियो के अधिकारों के संरक्षण हेतु विधिक उपायों को सख्ती से लागू किया जाना जरूरी है । आदिवासी भी इन देश के नागरिक है, अशिक्षा के चलते वे अपने अधिकारों व संवैधानिक उपबंधों से अनभिज्ञ है इसलिए उन्हें शिक्षित कर अपने अधिकारों के प्रति सजग करना जरूरी है। आदिवासी हमारे प्रेरणा स्रोत है जो प्रकृति के संरक्षण के लिए सदियो से प्रयासरत है, उनकी वजह से मानवजगत सुकून जीवनयापन कर रहा है, स्वच्छ पर्यावरण के चलते निरोग रह रहा है। आदिवासियो का संरक्षण प्रकृति संरक्षण के समान है, प्रकृति संरक्षण अच्छे भविष्य के लिए अति आवश्यक है, हमे सतत विकास की अवधारणा को अपनाते हुए सीमित मात्रा में संसाधनों का उपयोग करना चाहिए ताकि भविष्य में पीढ़ियां भी लाभान्वित हो सके ।[9,10]

प्रतिक्रिया दें संदर्भ

1. राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण, नालसा, भारत सरकार
2. योजना आयोग, भारत सरकार
3. आयोजन विभाग, राजस्थान सरकार
4. पत्रिकाए - योजना, कुरुक्षेत्र
5. विकिपीडिया
6. यूएनओ की आदिवासी मामलों के स्थायी फ़ोरम रिपोर्ट, 2007
7. भारतीय राजव्यवस्था - एम. लक्ष्मीकांत
8. भारत का संविधान - सुभाष कश्यप
9. वेबसाइट्स - http://hi.vikaspedia.in;http://m-hindi.indiawaterportal.org; www.tad.rajasthan.gov.in;www.sjerajasthan.gov.in
10. संबंधित पत्र पत्रिकाएं – The Hindu, times of India, PIB.

INNO SPACE
SJIF Scientific Journal Impact Factor
Impact Factor: 8.118

doi
crossref

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA

निस्केयर
NISCAIR

INTERNATIONAL JOURNAL OF INNOVATIVE RESEARCH

IN SCIENCE | ENGINEERING | TECHNOLOGY

9940 572 462 6381 907 438 ijirset@gmail.com

Scan to save the contact details